■ पुस्तक परिचय

'तरुणाई का तराना'

क्रान्तिकारी छात्रों-नौजवानों की शौर्यगाथा

'तरुणाई का तराना' कोई काव्यग्रंथ नहीं बल्कि चीन के क्रान्तिकारी लेखक याङ मो का ऐसा उपन्यास है जिसमें उन्होंने एक सड़कर बजबजा रहे अर्द्धसामन्ती-अर्द्धऔपनिवेशिक समाज की मुक्ति के लिए अदम्य उत्साह और अकूत बलिदानों का संकल्प लिए संघर्ष कर रहे नौजवान छात्र-छात्राओं की शौर्यगाथा का अत्यन्त सजीव, प्रेरणादायी और रोचक वर्णन किया है। मानव समाज का अब तक पूरा इतिहास निरपवाद रूप से इस बात का गवाह है कि पुराने समाज की कोख से नये समाज के जन्म में तरुणों का ही रक्त सर्वाधिक बहा है। समाज के क्रान्तिकारी परिवर्तन की इतिहासधारा असंख्य तरुण-तरुणियों के शौर्यपूर्ण संघर्षों से रक्तरंजित होती रही है, उनके रक्त से खिंची इतिहास की अग्रगामी रेखायें युग-युग से आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा की स्रोत रही हैं, और सदा बनती रहेंगी। यह उपन्यास सिर्फ क्रान्तिकारी संघर्षों का विवरण मात्र नहीं बल्कि क्रान्तिकारी संघर्ष की राजनीति, क्रान्ति की दिशा, सही रणनीति और उसके मुताबिक सही रणकौशल के सैद्धान्तिक विवेचन और उनके व्यावहारिक प्रयोग का एक अमूल्य दस्तावेज भी है।

विश्वनाथ मिश्र

इस सदी का चौथा दशक चीन के लिए एक भयानक अंधकार काल था, देश नैराश्यपूर्ण राष्ट्रीय संकट में घिरकर छटपटा रहा था। एक तरफ, हमलावर जापानी साम्राज्यवाद चीन के उत्तर-पूर्वी प्रान्तों पर कब्जा करके तेजी से भीतर की ओर घुसता चला आ रहा था। और दूसरी तरफ, सत्तारूढ़ कुओमिन्ताङ सरकार ने च्याङ काई-शेक के नेतृत्व में अप्रतिरोध और समर्पण की नीति पर अमल करते हुए विभिन्न अपमानजनक समझौतों पर हस्ताक्षर करके चीन के कई प्रान्तों पर जापान की सम्प्रभुता स्वीकार कर ली थी। इतना ही नहीं, उसने जापानी आक्रमण का प्रतिरोध कर रही लाल सेना और कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में संघर्ष कर रहे क्रान्तिकारी कार्यकर्ताओं और देशप्रेमी नौजवानों का बेरहमी से दमन और कत्लेआम करना शुरू कर दिया था। 1935 की सर्दियों में जब जापानी साम्राज्यवादियों ने चीन के होपेई और चाहार प्रान्तों में अपनी कठपुतली सरकारें गठित कर दीं और इस तरह पूरे उत्तरी चीन को खतरा पैदा हो गया, तो पेइपिङ के छात्र-छात्राओं ने देश की जनता का आह्वान किया, "चीन के लोगो, देश की रक्षा के लिए उठ खड़े हो।" इस नारे के साथ शुरू किया गया 9 दिसम्बर का आन्दोलन चीनी जनता द्वारा जापानी आक्रमण और प्रतिक्रियावादी कुओमिनताङ सरकार की अप्रतिरोध की नीति के विरोध की शानदार शुरुआत थी।

ये ही घटनाएं 'तरुणाई का तराना' उपन्यास की पृष्ठभूमि में हैं। असंख्य बहादुर युवक और युवतियां मशीनगनों, संगीनों, क्रूर यातनाओं, लम्बे कारावासों और यहां तक कि प्राणदण्ड की परवाह किये बिना दुश्मन के खिलाफ विकट संघर्ष में कूद पड़े। संघर्ष में एक गिरता, दूसरा उसकी जगह लेता, कुछ मुस्कराते हुए प्राण न्योछावर कर देते, सभी के दिलों में यह अटल विश्वास था कि एक-न-एक दिन उनका देश न सिर्फ साम्राज्यवाद को खदेड़कर बाहर कर देगा, बल्कि इंसानियत की गर्दन पर से सामन्ती शोषण और उत्पीड़न के जुवे को भी उतार फेंकेगा, और एक नये समाज का उदय होगा जिसकी लाल रश्मियां समाजवादी समाज के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करेंगी।

प्रसिद्ध लेखक जार्ज लुकाच के शब्दों में, "शहीद होना आसान है, विचार की खातिर निन्दा सहते हुए जीना ज्यादा कठिन है।" कहने की जरूरत नहीं कि 'तरुणाई का तराना' के संघर्षशील युवक-युवतियां शहादत के अंधे दीवाने नहीं हैं जो मौत की शमा पर परवान चढ़ जाते हैं बल्कि वे समाज के क्रान्तिकारी परिवर्तन की एक सुनिश्चित और उद्देश्यपूर्ण विचारधारा से लैस हैं। उनके जीवन का एक-एक क्षण, उनके खून का एक-एक कतरा क्रान्तिकारी चेतना के मातहत अपने महान लक्ष्य की दिशा में सार्थक योगदान करता है। और उपन्यास का सबसे महत्वपूर्ण और केन्द्रीय पक्ष भी यही है कि एक तरुण या तरुणी क्रान्तिकारी जीवन की अग्निदीक्षा कैसे होती है।

उपन्यास का केन्द्रीय चरित्र लिन ताओ-चिङ एक ऐसी ही तरुणी है जो एक पिछड़े अर्द्धसामन्ती-अर्द्धऔपनिवेशिक समाज की संड़ांध, क्रूरता और अमानवीयता के विरुद्ध संघर्ष में तप कर निखरते जा रहे एक युवा बुद्धिजीवी का प्रतिनिधित्व करती है।

ताओ-चिङ के जन्म और बचपन की कहानी सामन्ती व्यवस्था की चरम पतनशीलता के दौर में सामन्ती जमींदारों की क्रूर ऐयाशी और निकृष्ट धनलिप्सा की लोमहर्षक गाथा है। जेहोक प्रान्त के सुदूर पहाड़ी गांव के एक निहायत गरीब मजदूर परिवार की एक विधवा लड़की सिउ-नी को उस इलाके का जमींदार लिन पो-ताङ अपनी हवस का शिकार बनाता है और जब उससे एक बच्ची पैदा हो जाती है तो जमींदार का मन सिउ-नी से उचट जाता है और वह उसे अपनी हवेली से निकालकर उसके पहाड़ी गांव भेज देता है जहां वह लुटी-पिटी, विक्षिप्त-सी हालत में नदी में कूदकर आत्महत्या कर लेती है।

जमींदार की हवेली में ताओ-चिङ मामूली से मामूली गलती पर मार खाती हुई, जरखरीद गुलाम की तरह रहती थी। उसकी सौतेली मां उसे तंग करने का कोई मौका नहीं छोड़ती थी। वह नौकरों के कमरे में सोती थी। उसके कपड़े फटे हुए और चीलरों से भरे रहते, सर्दी से वह ठिठुरती रहती और नंगे पांवों में बिवाइयां फट जातीं। वह अपना सारा समय नौकरों, उनके बच्चों और गली-कूचों में चीथड़े और कोयला बीनने वाले दीन-हीन और अनाथ

लड़के-लड़कियों के बीच बिताती। जीवन के इस ढर्रे ने उसे गरीब, मेहनतकश लोगों के प्रति हमदर्दी और अपने जमींदार बाप और उसकी पत्नी के प्रति नफरत से भर दिया।

थोड़ी बड़ी होने पर जमींदार की पत्नी ने ताओ-चिङ को स्कूल भेजना शुरू कर दिया क्योंकि पढ़ी-लिखी युवती की बाजार में ज्यादा कीमत थी। लेकिन हाईस्कूल की परीक्षा से दो माह पहले ही उसकी सौतेली मां ने पढ़ाई का खर्च भेजना बन्द कर दिया क्योंकि ताओ-चिङ ने एक धनी बूढ़े खूसट अफसर से 'विवाह' करने से इंकार कर दिया था।

ताओ-चिङ को जमींदार की हवेली की नौकरानी चाची वाङ से अपनी मां के साथ हुए जुल्म की कहानी भी मालूम हो चुकी थी। उसने फिर कभी अपने घर वापस न जाने का फैसला कर लिया। सहेलियों की मदद से उसने हाईस्कूल की पढ़ाई पूरी की और नौकरी की तलाश में अपने एक मौसेरे भाई के पास चली गई जो एक गांव के स्कूल में शिक्षक था। परन्तु वहां पहुंचने पर उसे पता चला कि वह प्रधानाध्यापक की बदतमीजी से ऊबकर, अपनी पत्नी समेत कहीं चला गया था। बहरहाल प्रधानाध्यापक ने उसे स्कूल में ठहरने की जगह दे दी और आश्वासन दिया कि वह मजिस्ट्रेट से सिफारिश करके उसे स्कूल में नौकरी दिलवा देगा। दरअसल, प्रधानाध्यापक इस खूबसूरत लड़की को मजिस्ट्रेट के यहां सप्लाई करके अपनी तरक्की का मार्ग खोलना चाहता था। इंतजार के दिनों में ताओ-चिङ की मुलाकात पीकिङ विश्वविद्यालय के एक छात्र युङ-त्से से हुई, जो उसी गांव का रहने वाला था और प्रधानाध्यापक का मौसेरा भाई था। उसका बाप गांव का एक प्रभावशाली जमींदार था तथा मजिस्ट्रेट का भी दोस्त था। युङ-त्से ने अपनी रूमानी साहित्यिक बातों से कल्पनाशील ताओ-चिङ को अपनी ओर आकर्षित कर लिया। एक बार जब ताओ-चिङ को प्रधानाध्यापक की कुत्सित योजना का पता चला तो वह हताश होकर आत्महत्या करने जा रही थी, तभी युङ-त्से ने आकर उसे बचा लिया। उसने अपने प्रभाव से ताओ-चिङ को उस प्राइमरी स्कूल में अध्यापिका भी बनवा दिया। ये सब बातें थी जिनकी वहज से ताओ-चिङ युङ-त्से के काफी करीब खिंच आयी। पढ़ाई करने पीकिङ चले जाने के बाद भी वह ताओ-चिङ को लगातार खत लिखा करता था। ताओ-चिङ उसके प्रति अधिक से अधिक भावुक होती गयी।

रोमांटिक भावकल्पना में विचरण करती हुई ताओ-चिङ के दिमाग में राजनीति ने सबसे पहले तब प्रवेश किया जब उसकी मुलाकात एक कम्युनिस्ट कार्यकर्ता लू चिआ-चुआन से हुई, जो पीकिङ विश्वविद्यालय का छात्र था। वह अपनी बीमार मां और बहन से मिलने गांव आया था। इन्हीं दिनों जापान ने चीन पर आक्रमण करके उसके तीन उत्तर-पूर्वी प्रान्तों पर कब्जा कर लिया था। इसकी सब जगह गरमागरम चर्चा चल रही थी। अध्यापक कक्ष में चल रही चर्चा के दौरान लू चिआ-चुआन ने जिस बेबाक और गहरी राजनीतिक समझदारी का परिचय देते हुए अपनी बात रखी उससे ताओ-चिङ को एक नई रोशनी मिल गयी। लू चिआ-चुआन की बात से यह चीज तो उसकी समझ में आ रही थी कि बिना सशस्त्र संघर्ष के जापानी साम्राज्यवाद को शिकस्त नहीं दी जा सकती, लेकिन अन्य अध्यापकों की भांति उसकी भी समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि इसमें बुद्धिजीवियों की क्या भूमिका हो सकती है। लू चिआ-चुआन का उत्तर था: "जरूरी नहीं कि हर कोई देशभक्त अपने कंधे पर रायफल धारण करे और रणक्षेत्र में जाकर लड़े। आप लोग प्रचार कार्य द्वारा जनता को जागृत कर सकते हैं। अगर आप लोग छात्रों को अपने देश को प्यार करने और सम्मान देने की शिक्षा दें तो यह हथियार उठाने जैसा ही है।" दरअसल "किसी भी सशस्त्र क्रान्ति के लिये विचारों की क्रान्ति एक अनिवार्य पूर्वशर्त है"—इस क्रान्तिकारी सिद्धान्त की पहली शिक्षा ताओ-चिङ को लू चिआ-चुआन से प्राप्त हुई। उसके प्रभावशाली व्यक्तित्व, गहरी राजनीतिक समझ और स्पष्टवादिता ने ताओ-चिङ को अभिभूत कर दिया। अब वह अपने मन में तुलना करने लगी कि जहां एक तरफ युङ-त्से सिर्फ सुन्दर साहित्यिक रूपों और प्रचलित प्रेमालापों की ही चर्चा किया करता था और वर्तमान समाज की विद्रूपताओं और भयंकरताओं से एकदम कटा-कटा सा अपनी रूमानी दुनिया में मगन रहता था, उसके विपरीत, यह नौजवान वर्तमान सामाजिक जिन्दगी से एक जिन्दा सरोकार रखता था।

ताओ-चिङ अपने दिल से युङ-त्से को निकाल तो नहीं पायी, अलबत्ता उसने राजनीतिक जीवन में कुछ-कुछ प्रवेश जरूरत कर लिया। अब वह अध्यापकों और छात्रों के बीच जनविरोधी कुओमिन्ताङ

सरकार की अप्रतिरोध की नीति की आलोचना किया करती और बच्चों को महान देशभक्तों की कहानियां सुनाया करती। इस तरह उसके और छात्रों के बीच जीवन्त राजनीतिक रिश्ता पनपने लगा। ताओ-चिङ के व्यक्तित्वांतरण की शुरुआत हो चुकी थी।

परन्तु प्रधानाध्यापक की बकझक और नीचतापूर्ण व्यवहार से तंग आकर ताओ-चिङ को स्कूल की नौकरी छोड़ देनी पड़ी। वह अपने घर वापस जा नहीं सकती थी। लिहाजा वह पीकिङ विश्वविद्यालय में युङ-त्से के पास चली गयी।

युङ-त्से एक निहायत निकृष्ट कोटि का बुद्धिजीवी था। उसकी दुनिया एकदम आत्मकेन्द्रित थी। हालांकि अभी उसकी पढ़ाई पूरी नहीं हुई थी, फिर भी, उसने अभी से अपने दोस्तों और प्रोफेसरों की इस उम्मीद में चापलूसी और खातिरदारी शुरू कर दी थी कि उनके प्रयास से उसे कोई न कोई अच्छी नौकरी मिल जायेगी। ताओ-चिङ आजीविका के मामले में स्वयं आत्मनिर्भर बन जाना चाहती थीं और उसने कई जगह कोशिश की पर सफल न हो सकी। युङ-त्से बातों से तो ताओ-चिङ के आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन जाने का हामी था, परन्तु भीतर-भीतर वह अत्यन्त दकियानूसी व्यक्ति था। वह चाहता था कि ताओ-चिङ महज एक घरेलू पत्नी बन कर रहे। दरअसल वह मूल्यों के स्तर पर सामन्ती मूल्यों से जकड़ा हुआ था, उसके अध्ययन का विषय भी पुरातन सामन्ती चीनी साहित्य था, यहां तक कि उसका पहनावा और रहन-सहन भी पुरातनपंथी ही था। इसके विपरीत ताओ-चिङ वर्तमान में जीती हुई एक भविष्योन्मुख युवती थी। वह पुरातनपंथी समाज की जकड़बन्दियों से निकल कर एक आजाद समाज में उन्मुक्त सांस लेना चाहती थी। युङ-त्से और ताओ-चिङ का आपसी अन्तरविरोध इतना बढ़ा कि एक दिन ताओ-चिङ हमेशा के लिए युङ-त्से से पिण्ड छुड़ा लेने के लिए भाग निकलने की सोचने लगी।

1933 का मई दिवस समारोह पीकिङ विश्वविद्यालय के छात्रों ने काफी जोर-शोर से मनाया और पुलिस व सेना के प्रबल प्रतिरोध का मुकाबला करते हुए जापानी साम्राज्यवाद और अप्रतिरोध व समर्पण की नीति पर चल रही जन-विरोधी कुओमिन्ताङ सरकार के खिलाफ जबरदस्त प्रदर्शन किये और जमकर नारेबाजी की। पुलिस और गुप्तचर विभाग के जासूस देशभक्त और क्रान्तिकारी छात्र-छात्राओं को खोज-खोज कर गिरफ्तार करने लगे, यातनाएं देने लगे और उनकी निर्मम हत्या करने लगे। खासतौर से कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी लू चिआ-चुआन की पग-पग पर जासूसी और खोजबीन की जाने लगी। ऐसी ही संकटपूर्ण स्थिति में, लू चिआ-चुआन जासूसों और पुलिस को चकमा देते हुए एक दिन ताओ-चिङ के कमरे में पहुंचा, जो युङ-त्से की कूढ़मगजी से अत्यन्त क्षुब्ध, हताश बैठी हुई थी। उसे अपना जीवन नीरस और बेमतलब लग रहा था। बातचीत के दौरान एकदम हताश होकर उसने लू चिआ-चुआन से कहा कि ऐसे बन्द जीवन से तो बेहतर है क्रान्ति में शिरकत करके बहादुराना मौत पाना। लू चिआ-चुआन ने ऐसी सोच को गलत बताया और कहा, "हम क्रान्ति में मरने के लिए नहीं, बल्कि जीने के लिए शामिल होते हैं—पहले से कहीं अधिक सार्थक जीवन जीने के लिए और करोड़ों उत्पीड़ित लोगों के लिए खुशहाली लाने के लिए जीते हैं।" उसने यह भी कहा कि बिना कोई सार्थक काम किये मरने की सोचना संघर्ष से पलायन है। उसने उसे कुछ कागजात दो-तीन दिन के लिए सुरक्षित रखने के लिए दिये तथा कहा कि वह इन्हें आकर ले जायेगा और अगर नहीं आया तो ताओ-चिङ इन्हें जला दे। इसके बाद वह एक जरूरी संदेश एक निश्चित ठिकाने पर पहुंचाने के लिए ताओ-चिङ को भेज कर उसके लौटने का इंतजार करने लगा। इसी बीच युङ-त्से वापस आ पहुंचा। लू चिआ-चुआन को अपने कमरे में देखकर वह जल-भुन उठा और उसे अपने घर से निकाल दिया। बाहर निकल कर वह अपने एक दोस्त के दरवाजे पर पहुंचा ही था कि गिरफ्तार कर लिया गया। जेल में उसे भंयकर यातनायें दी गयीं, फिर भी दुश्मन उससे कोई राज उगलवाने में सफल न हो सका। यही नहीं, लू चिआ-चुआन जेल में भी संघर्ष करता रहा, अपनी मांगों को लेकर उसने जेल में कैदियों की भूख हड़ताल करा दी। अन्ततः उसे मार डाला गया। परन्तु मरने से पहले वह अन्तिम सांस तक अपने क्रान्तिकारी लक्ष्य की दिशा में काम करता रहा।

"हम क्रान्ति में मरने के लिए नहीं, बल्कि जीने के लिए शामिल होते हैं—पहले से कहीं अधिक सार्थक जीवन जीने और करोड़ों उत्पीड़ित लोगों के लिए खुशहाली लाने के लिए जीते हैं।"

इधर ताओ-चिङ जब संदेश पहुंचा कर वापस लौटी तो लू चिआ-चुआन को न पाकर सशंकित हो उठी। वह युङ-त्से के व्यवहार से अत्यन्त क्षुब्ध और दुखी थी। दस दिन तक जब लू चिआ-चुआन वापस अपने कागजात लेने न लौटा तो उसने कागजात वाला ब्रीफकेस खोला। उसमें साम्राज्यवाद-विरोधी और कुओमिन्ताङ सरकार विरोधी पर्चे थे। उसने उन्हें जलाया नहीं, बल्कि साहस करके अकेले ही कई रात मेहनत करके गलियों में जगह-जगह चिपका आयी। बिना कुछ बताये बाहर निकल जाने और देर रात को वापस आने की वजह से युङ-त्से बहुत नाराज था। दोनों का आपसी कलह इस कदर बढ़ गया कि ताओ-चिङ ने घर छोड़ने का फैसला कर लिया।

अभी वह अपना सामान समेट कर जाने की तैयारी कर ही रही थी कि एक गद्दार कम्युनिस्ट कार्यकर्ता ताई यू उससे मिलने आ पहुंचा। वह कुओमिन्ताङ सरकार का मुखबिर बन चुका था, परन्तु ताओ-चिङ को इसका पता न था। लिहाजा उसने लू चिआ-चुआन से अपनी अन्तिम मुलाकात और पर्चे चिपकाने का सारा विवरण खोलकर बता दिया। ताई यू धैर्यपूर्वक सुनता रहा। वह बार-बार ताओ-चिङ को 'कामरेड', 'कामरेड' कहकर सम्बोधित करता तथा क्रान्तिकारी लफ्फाजी की बातें बताता रहा। परन्तु भोली-भाली और अनुभवहीन ताओ-चिङ इसे समझ न पायी। ताई यू के चले जाने के बाद वह दूसरी जगह जाकर रहने लगी। यहां वह क्रान्तिकारी साहित्य पढ़ने और क्रान्तिकारी साथियों से मुलाकात करने के लिए पूरी तरह आजाद थी। वह जब-तब गिरफ्तार क्रान्तिकारी साथी सू निङ को देखने और अपनी सहेली वाङ सियाओ-येन से मिलने चली जाया करती थी। ताई यू उसकी गतिविधियों की टोह लेता रहता था। गद्दार ताई यू के कारण वह एक दिन गिरफ्तार हो गयी। गिरफ्तारी के इस षड्यंत्र में वह बूढ़ा खूसट अफसर हू मेङ ऐन भी शामिल था, जो उससे शादी करना चाहता था। उस बूढ़े ने ताओ-चिङ को जमानत पर इसलिए रिहा करवा दिया ताकि वह रुपयों के लालच या धौंसपट्टी दिखाकर उसे मना सके। परन्तु ताओ-चिङ ने उसे दुत्कार दिया। हू ने उसे धमकाते हुए तीन दिन की मोहलत दी तथा यह

कहकर चला गया कि यदि उसने इस अवधि में उसकी बात नहीं मानी तो वह उसे कम्युनिस्ट गतिविधियों में शामिल होने के इल्जाम में फंसा देगा। ताओ-चिङ अपनी सहेली सियाओ-येन के पिता प्रोफेसर वाङ हुङ पिन के सहयोग से तिङ-त्सिएन नामक स्थान पर चली गयी। वहां प्रोफेसर वाङ की सिफारिश पर एक प्राइमरी स्कूल में उसे अध्यापिका की नौकरी मिल गयी।

तिङ त्सियेन में काम करते हुए ताओ-चिङ की मुलाकात एक कम्युनिस्ट कार्यकर्ता चियाङ हुआ से हुई। उसके सम्पर्क में आकर ताओ-चिङ ने काफी राजनीतिक जानकारी प्राप्त की तथा उसे मेहनतकश लोगों से मेलजोल बढ़ाने की प्रेरणा मिली। चियाङ हुआ ताओ-चिङ को व्यावहारिक कामों में रुचि लेने और मजदूरों-किसानों से घनिष्ठ सम्पर्क बढ़ाने की सलाह देकर चला गया।

इस बीच गद्दार क्रान्तिकारी ताई यू की साजिश के चलते ताओ-चिङ फिर गिरफ्तार होने वाली थी। अपने एक छात्र से इसकी भनक मिलते ही ताओ-चिङ को वह जगह छोड़ देनी पड़ी। वह अपनी एक सहेली सिऊ यीङ के घर जाकर छिप गयी। यहीं पर उसकी मुलाकात एक अधेड़ क्रान्तिकारी महिला से हुई जिसकी एक बार चिआङ हुआ ने "मौसी ली" कहकर चर्चा की थी। मौसी ली पार्टी कार्यकर्ता थी। उसकी मदद से तथा पार्टी कार्यकर्ताओं की राय से ताओ-चिङ को एक जमींदार परिवार के बच्चों को ट्यूशन पढ़ाने का काम मिल गया। पढ़ाने के बहाने कुछ जरूरी सूचनाएं एकत्र करना तथा उन्हें पार्टी को सौंपना उसकी जिम्मेदारी थी।

जमींदार परिवार में काम करते हुए ताओ-चिङ ने एक घरेलू नौकरानी से मेलजोल बढ़ा लिया तथा उसकी मदद से वह काली सूची प्राप्त करने में सफल हो गयी जो जमींदार के बेटे सूङ यू पिन ने तैयार कर रखी थी, जिसमें तमाम कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों और देशभक्तों के नाम थे। दरअसल हुआ यह था कि जमींदार के शोषण और अमानवीय व्यवहार [illegible] प्रतिक्रियास्वरूप सूङ यू-पिन ने कुओ-मिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों से मिलकर तमाम क्रान्तिकारियों और देशभक्तों को पकड़वा देने की योजना बना ली थी। इनमें ताओ-चिङ का नाम भी था।

> **"हुङ पिन, सोचो तो, मैं पचास के करीब की हो चुकी हूं, और सियाओ-येन की बहनें अभी छोटी-छोटी हैं। अगर तुम बाहर जाओ और कुछ हो गया तो..." प्रोफेसर ने झिड़कते हुए कहा, "अगर किसी ने यह खतरा उठाने की हिम्मत नहीं की तो यह दुनिया जल्दी ही खत्म हो जायेगी।"**

ताओ-चिङ को वहां से निकल भागने में एक मजदूर चेङ तेह-फू से मदद मिली। यह वही खेत मजदूर था जो पहले ताओ-चिङ के जमींदार बाप का आसामी रह चुका था। परन्तु उसके जमींदार बाप ने इस मजदूर को बरबाद कर दिया था। उसने चेङ की पत्नी को बलात्कार का शिकार बनाया था जिसकी ग्लानि न बर्दाश्त कर पाने के कारण उसने आत्महत्या कर ली थी। इसके बाद वह वहां से भागकर यहां चला आया था। पहले तो चेङ तेह-फूह ताओ-चिङ से नफरत करता था, परन्तु बाद में जब उसे ताओ-चिङ के व्यक्तित्व की असलियत का पता चला तो वह दिल से उसके साथ हो गया। ताओ-चिङ में भी एक भारी परिवर्तन हुआ। अब तक जमींदारों के प्रति उसके मन में जो घृणा थी वह व्यक्तिगत कारणों से थी—उसके जमींदार बाप ने उसे अत्यन्त घृणित रूप में प्रताड़ित किया था। परन्तु खेत मजदूर के साथ उसके बाप द्वारा किये गये शर्मनाक व्यवहार ने उस पूरे जमींदार वर्ग के ख़िलाफ घृणा से भर दिया। अब उसके जेहन में यह तसवीर साफ हो गयी थी कौन उसका मित्रवर्ग है और कौन शत्रुवर्ग।

जमींदार के यहां से निकल भाग कर ताओ-चिङ पुन: पेइपिङ आ गई, तथा अपनी सहेली सियाओ-येन से मुलाकात की। ताओ-चिङ के लगातार सम्पर्क से सियाओ-येन दिली तौर पर क्रान्तिकारी विचारों की कायल हो गई।

इसी बीच ताओ-चिङ फिर गिरफ्तार हो गयी। बूढ़ा खूसट निदेशक हू मेङ-ऐन अब भी उसके पीछे पड़ा हुआ था। जेल में ताओ-चिङ को भयंकर यातनायें दी गयीं। उसकी नाक में मिर्च का पानी डाला गया, उसके शरीर को गर्म लोहे की सलाखों से दागा गया। वह खून से लथपथ कई दिनों तक बेहोश रही, फिर भी उसने अपनी जबान न खोली। जेल में ही उसकी मुलाकात लम्बे संघर्षों में तपी-तपायी क्रान्तिकारी सिद्धान्त और व्यवहार की ढेर सारी शिक्षा ताओ-चिङ ने ग्रहण की। चेङ चिङ को मृत्यु दण्ड दे दिया गया। ताओ-चिङ इससे दुखी तो बहुत हुई परन्तु अब क्रान्तिकारी संघर्ष और क्रान्तिकारी लक्ष्य में उसकी आस्था और बढ़ गयी। वह जेल के भीतर साथी कैदियों की भूख हड़ताल में भी शामिल हुई। उसी के प्रभाव से एक कैदी छात्र शू सिऊ भी क्रान्तिकारी संघर्ष की कायल बन गयी।

प्रोफेसर वाङ ने ताओ-चिङ को जमानत पर रिहा करवा दिया। इस रिहाई में सबसे बड़ा कारण यह रहा कि लाख कोशिश के बावजूद जेल अधिकारियों को ताओ-चिङ के खिलाफ कोई सबूत नहीं मिल पाया था।

जेल से छूटने के बाद कम्युनिस्ट पार्टी ने ताओ-चिङ की संकल्पबद्धता और क्रान्तिकारी सिद्धान्त और व्यवहार में आस्था तथा शिरकत को देखकर उसे पार्टी की सदस्यता प्रदान की। ताओ-चिङ के जीवन में यह एक अविस्मरणीय आनन्ददायी घटना थी। उसे पार्टी की ओर से एक महिला क्रान्तिकारी लिऊ यी-फेङ के साथ साहित्य-वितरण और जनसम्पर्क के काम में लगा दिया गया।

इस बीच उसकी सहेली सियाओ-येन गद्दार ताई यू की गिरफ्त में फंस चुकी थी। उस गद्दार ने उसे इस कदर गुमराह कर दिया था कि वह उससे शादी तक करने को तैयार हो गयी थी। ताओ-चिङ ने उसे ताई यू के सन्देहास्पद चरित्र के बारे में सतर्क भी किया पर उसने ताओ-चिङ की बात पर विश्वास नहीं किया। ताई यू इतना चालाक था कि एक बार उसने चिआङ हुआ को भी फंसा दिया था, परन्तु वह अपने कौशल से बच निकला। उसने ताई यू की पार्टी विरोधी गतिविधियों और कुओमिन्ताङ से उसकी सांठ-गांठ की पूरी रिपोर्ट पार्टी कमेटी को दे दी, जिसका नतीजा यह हुआ कि वह पार्टी से निकाल बाहर किया गया। इसी बीच सियाओ-येन का भी ताई यू से मोहभंग हो गया। उसने एक दिन ताई यू की जेब से एक ऐसी काली सूची बरामद कर ली जिसमें तमाम कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों और देशभक्तों के नाम थे। अब सियाओ-येन का पुन: ताओ-चिङ से घनिष्ठ सम्बन्ध बढ़ गया और वह क्रान्तिकारी कामों में जुट गयी। उधर पार्टी से निकाल दिये जाने

के बाद अब ताई यू भितरघाती का काम नहीं कर सकता था। अब वह कुओमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों के किसी काम का नहीं रहा इसलिए प्रतिक्रियावादियों ने उसकी हत्या कर दी।

जापानी साम्राज्यवाद और प्रतिक्रियावादी कुओमिन्ताङ सरकार की समर्पणकारी एवं अप्रतिरोध की नीति के खिलाफ छात्रों का एक व्यापक संयुक्त फेडरेशन संगठित करने का निर्णय किया गया। चिआङ हुआ, ताओ-चिङ और तमाम क्रान्तिकारी एवं प्रगतिशील छात्र इस काम में जुट गये। प्रतिक्रियावादी छात्रों एवं उनके संगठनों से जमकर संघर्ष हुआ। ताओ-चिङ इसमें कई बार अपमानित और प्रताड़ित भी हुई। परन्तु अब वह पहले की तरह रूमानी क्रान्तिकारिता की शिकार न थी, न ही वह अब पहले की तरह दुस्साहसी रह गयी थी। वह एक क्रान्तिकारी विचारधारा के तहत संघर्ष के सारे कठिनाइयां झेलते हुए लक्ष्य की दिशा में निरन्तर आगे बढ़ते रहने की मानसिक परिपक्वता हासिल कर चुकी थी। अब न तो उसके अन्दर पहले जैसी कोरी आदर्शवादी कल्पनाशीलता थी और न जीवन से निराश होकर दुस्साहसपूर्ण शहादत में जीवन की सार्थकता खोजने का उतावलापन। क्रान्तिकारीकरण की आग में तपकर वह काफी निखर चुकी थी, उसने संघर्ष की निर्ममता को पहचान लिया था, तथा ढुलमुलपन या उदारतावाद की दुर्बलता से निजात पा चुकी थी। यद्यपि अब भी उसके मन में शहीद लू चिआ-चुआन की एक आदर्श क्रान्तिकारी छवि बनी हुई थी, फिर भी उसके क्रान्तिकारीकरण की व्यावहारिक अग्निदीक्षा में चिआङ हुआ का अविस्मरणीय योगदान था। इसीलिए जब एक दिन चिआङ हुआ ने उसके समक्ष अपने हार्दिक प्रेम का इजहार किया तो उसने अपने को अत्यन्त सम्मानित महसूस किया, हालांकि लू चिआ-चुआन की याद एक टीस बनकर उसके मन में उठी थी, जिसकी तनिक भी कम पीड़ा चिआङ हुआ को न थी।

बहरहाल, ये क्रान्तिकारी तरुण पीकिङ विश्वविद्यालया और दूसरे विश्वविद्यालयों तथा कालेजों और स्कूलों के छात्रों का संयुक्त फेडरेशन बना लेने में सफल हो गये। उसका नेतृत्व उनके हाथ में आ गया। 9 सितम्बर 1935 को इस फेडरेशन के आह्वान पर छात्रों ने आम हड़ताल कर दी, प्रदर्शन किया, नारेबाजी की और सशस्त्र पुलिस और सेना से जमकर संघर्ष किया, जिसमें कई हताहत और कई गिरफ्तार हुए। एक तरफ माओ त्से-तुङ के नेतृत्व में लाल सेना जापानी साम्राज्यवादियों और कुओमिन्ताङ प्रतिक्रियावादियों से संघर्ष करती हुई निरंतर आगे बढ़ रही थी, वहीं, दूसरी तरफ इन तरुण छात्र-छात्राओं का वैचारिक आन्दोलन और जनसंघर्ष आम जनता को जागृत करते हुए व्यापक जनाधार तैयार करने की दिशा में निरन्तर आगे बढ़ रहा था। सिद्धान्त और व्यवहार, वैचारिक संघर्ष और सशस्त्र संघर्ष का यह परस्पर तालमेल क्रान्तिकारी संघर्ष को क्रमशः मंजिल की ओर बढ़ाता जा रहा था। युवाओं ने साम्राज्यवादी दुश्मन को उखाड़ फेंकने और युगों से सड़कर बजबजा रहे सामन्ती कचरे को साफ कर एक नये समाज की रचना का जो तराना छेड़ा उसकी रवानी में न सिर्फ अब तक तटस्थ बने पढ़ाकू छात्र ही शामिल हुए, बल्कि कई बुजुर्ग प्रोफेसर तक भी अपनी मध्यवर्गीय जड़ता को तोड़कर सड़कों पर उतर आये। 16 सितम्बर 1935 का विशाल प्रदर्शन इस मायने में अभूतपूर्व था कि उसमें प्रोफेसर वाङ जैसे बुजुर्ग अध्यापक भी अपनी बूढ़ी पत्नी और दूसरे साथियों के साथ प्रदर्शन में शामिल हुए, नारे लगाये, पुलिस और सेना के डंडे खाये। उन्होंने अपने जीवन को पहली बार सार्थक हुआ समझा। यहां पर सियाओ-येन के पिता प्रोफेसर और उसकी मां यानी श्रीमती वाङ के बीच प्रदर्शन में शामिल होने के पूर्व हुई वार्ता खासतौर से किसी भी बुद्धिजीवी अध्यापक के लिए प्रेरणादायी है। जब जवानों जैसे जोश से भरकर प्रोफेसर प्रदर्शन में जाने के लिए उठा, तो उसकी पत्नी ने चिन्तित होकर कहा, "हुङ पिन, सोचो तो, मैं पचास के करीब की हो चुकी हूं, और सियाओ-येन की बहनें अभी छोटी-छोटी हैं। — अगर तुम.... बाहर जाओ और कुछ हो गया तो..." प्रोफेसर ने झिड़कते हुए कहा, "अगर किसी ने यह खतरा उठाने की हिम्मत न की तो यह दुनिया जल्दी ही खत्म हो जायेगी।" इस पर श्रीमती वाङ भी प्रोफेसर के साथ चलने को तैयार हो गयीं।

16 सितम्बर, 1935 को हुए इस ऐतिहासिक प्रदर्शन को सोद्देश्यता, दिशा और लक्ष्य प्राप्ति के लिए समर्पित संघर्ष में बुद्धिजीवियों—खासतौर से छात्र-नौजवानों की भूमिका को रेखांकित करने के बाद याङ मो का यह उपन्यास विराम ले लेता है। परन्तु जिन्दगी चलती रहती है, गाती रहती है और लड़ती रहती है। दरअसल, जैसा कि महान नाटककार और साहित्यिक समीक्षक बर्तोल्त ब्रेष्ट ने कहा है, किसी साहित्य या कला में चित्रित जिन्दगी की तुलना सिर्फ जिन्दगी से की जानी चाहिए। और इस कसौटी पर यह उपन्यास पूरी तरह खरा उतरता है। चीन के तत्कालीन समाज की जिन्दगी क्या है—एक खमीर-क्रिया की उठती हुई बुजबुजाहट, जिसमें कुछ चीजें सड़-गल रही होती हैं, तो कुछ नयी चीजें जन्म ले रही होती हैं; एक धारा इतिहास को आगे की ओर गति दे रही होती है, तो दूसरी इतिहास के पहिए को पीछे की ओर धकेलने की कोशिश कर रही होती है। समाज के इसी यथार्थ में व्यक्ति की पक्षधरता और उसकी भूमिका, उसकी प्रगतिशीलता या प्रतिगामिता को चिन्हित करती है। ठीक इसी सामाजिक यथार्थ की घनीभूत अभिव्यक्ति का दायित्व किसी रचनाकार पर होता है। वह कौन-सा पक्ष ग्रहण करता है, यही वह चीज है जो उसे एक प्रगतिशील या प्रतिगामी साहित्यकार बनाती है। कहना न होगा कि याङ मो की पक्षधरता पहले प्रकार की है जिसके अनुरूप उसने अपनी भूमिका का बखूबी निर्वाह किया है।

हालांकि यह उपन्यास चीनी सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया है, फिर भी यह भारत की वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों में छात्रों, नौजवानों, अध्यापकों और तमाम दूसरे बुद्धिजीवियों को सामाजिक संघर्ष में अपनी भूमिका का निर्वाह करने में आइना दिखाता है। एक तरफ भारतीय पूंजीवादी व्यवस्था पतनशील साम्राज्यवादी और पुनरुत्थानवादी सामंती सांस्कृतिक मूल्यों से साठ-गांठ कर उसका बदबूदार कचरा थोक के भाव समाज में फैला रही है, तो दूसरी तरफ देश के विभिन्न भागों में प्रगतिशील और परिवर्तनकामी छात्र-नौजवान और दूसरे बुद्धिजीवी इन ताकतों के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं। हालांकि इतिहास को पीछे ले जाने वाली ताकतों के विरुद्ध प्रगति और परिवर्तन की ताकतें आज कमजोर और बिखरी हुई हैं पर इनमें ही नव-सृजन के अंकुर हैं।

आज इतिहास की अग्रगामी धारा को और मजबूत बनाने की जरूरत है। इसके लिए एक व्यापक वैचारिक-सांस्कृतिक आंदोलन की दरकार है जिसमें समाज के सबसे गतिशील, ऊर्जस्वी और स्फूर्त समुदाय—छात्रों और नौजवानों की भूमिका सर्वोपरि है। ऐसे बुद्धिजीवियों के लिए याङ मो का यह उपन्यास मार्गदर्शक सिद्ध होगा।

***'तरुणाई का तराना'* उपन्यास जल्दी ही**
परिकल्पना प्रकाशन, लखनऊ से प्रकाशित होगा।